वैदिकवाङ्मय

परीक्षा दृष्टि

(NTA, UGC-NET/JRF, SLET, DSSSB, GIC-Lecturer, GDC, Higher Education
असिस्टेण्ट प्रोफेसर, डायट प्रवक्ता आदि प्रतियोगी परीक्षाओं के लिए उपयोगी)

लेखक
सर्वज्ञभूषण

प्रकाशक
संस्कृतगङ्गा, दारागञ्ज, प्रयागराज
www.sanskritganga.org

ISBN : 978-81-938257-1-6

☛ **प्रकाशक**

संस्कृतगङ्गा (पञ्जीकृत)
59, मोरी, दारागञ्ज, प्रयागराज
(कोतवाली दारागञ्ज के आगे, गङ्गाकिनारे, संकटमोचन छोटे हनुमान् मन्दिर के पास)
कार्यालय - 7800138404, 9839852033
email-Sanskritganga@gmail.com
बेवसाइट - www.Sanskritganga.org

☛ **वितरक**

* **युनिवर्सल बुक्स**
अल्लापुर, प्रयागराज
* **राजू पुस्तक केन्द्र**
अल्लापुर, प्रयागराज (उत्तर प्रदेश) मो० 9453460552

☛ संस्करण - मई-2019

☛ **मूल्य – ₹ 145 /-** (एक सौ पैंतालीस रुपये मात्र)

☛ **पृष्ठविन्यास** – कृष्णा कम्प्यूटर संस्थान, दारागंज, प्रयागराज

☛ **मुद्रक** – एकेडमी प्रेस, दारागंज, प्रयागराज

भूमिका

प्रिय संस्कृतमित्राणि

नमः संस्कृताय!

वेद भारत की अस्मिता है। वेदों के बिना भारत का अस्तित्व नगण्य है। वेदों के पठन-पाठन पर हमारे ऋषि-मुनियों ने सदैव अत्यधिक बल दिया है, क्योंकि सम्पूर्ण मानव जाति का कल्याण वैदिक मार्ग का अनुसरण करने में ही है। मनु ने वेदों को सभी धर्मों का मूल बताया है - 'वेदोऽखिलो धर्ममूलम्'। वेदों में मानवमात्र के कर्तव्यों का निर्देश किया गया है -

यः कश्चित् कस्यचिद्धर्मो मनुना परिकीर्तितः।
स सर्वोऽभिहितो वेदे सर्वज्ञानमयो हि सः॥

पतञ्जलि भी निःस्वार्थभाव से वेदों का साङ्गोपाङ्ग अध्ययन करने हेतु प्रेरित करते हैं - 'ब्राह्मणेन निष्कारणो धर्मः षडङ्गो वेदोऽध्येयो ज्ञेयश्च।' वेदों को प्रमाणरूप में स्वीकार करना ही एक सच्चे आर्य का लक्षण है - 'प्रामाण्यबुद्धिर्वेदेषु।' परन्तु आज की पीढ़ी वैदिकवाङ्मय के अमूल्य ज्ञान से अनभिज्ञ प्राय है, जो कि भारत की अस्मिता के लिए अत्यन्त विचारणीय प्रश्न है। इस विषय पर गम्भीरतापूर्वक अपने इष्ट मित्रों के साथ विचार कर एक ऐसी पुस्तक का निर्माण करने का सङ्कल्प लिया गया, जो आज की युवा पीढ़ी को वैदिक वाङ्मय को सरलतम भाषा में परिचित करा सके। इस पुस्तक के माध्यम से छात्र वैदिक वाङ्मय के सारगर्भित स्वरूप से परिचित हो सकेगा।

चार वेद (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद), चार उपवेद (आयुर्वेद, धनुर्वेद, गान्धर्ववेद, इतिहासवेद), छः वेदाङ्ग (शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द, ज्योतिष) वेदों के ब्राह्मणग्रन्थ, आरण्यक तथा उपनिषदों के ग्रन्थीय स्वरूप को क्रमशः महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं सहित सरलतम रूप में प्रस्तुत

किया गया है। वैदिक देवताओं के सम्बन्ध में प्रकाश डालते हुए अद्यावधि लिखे गये वेदभाष्यों का भी विवरण प्रस्तुत किया गया है। वैदिक वाङ्मय से सम्बन्धित महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं की सूची इस पुस्तक के महत्त्व को और अधिक बढ़ाती है। **यह पुस्तक UGC-NET/JRF, SLET, DSSSB, GDC, असिस्टेण्ट प्रोफेसर, डायट प्रवक्ता आदि प्रतियोगी परीक्षार्थियों के लिए अत्यन्त उपयोगी होगी - ऐसा मेरा विश्वास है।**

पङ्कजकुमार शर्मा, सत्यप्रकाश साहू, सुमन सिंह, अम्बिकेश प्रताप सिंह, कविता सिंह, नीलम गुप्ता, नितीश उपाध्याय, स्नेहा पाण्डेय, महिमा यादव, कृष्णकुमार, राजेश तिवारी, श्यामकिशोर मिश्र, सन्तोष यादव 'साहब' आदि मित्रों के निरन्तर सहयोग व चिन्तन से ही यह कार्य पूर्णता को प्राप्त कर सका है। इस ग्रन्थ को लिखते समय पूरी सावधानी के साथ यह प्रयत्न किया गया है कि पाठकगण वैदिकवाङ्मय के महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं से अनायास परिचित हो सकें।

श्रीमान् अनन्त प्रसाद त्रिपाठी (गहनौआ, रीवा म.प्र.) एवं प्रो. ललितकुमार त्रिपाठी (प्रयागराज) के श्री चरणों में प्रणाम करते हुए ये आशा है कि यह ग्रन्थ निश्चित ही पाठकों की जिज्ञासा को पूर्णकर वेदों के प्रति उन्हें आकृष्ट करेगा।

विनयावनत

सर्वज्ञभूषण

❑❑

विषयसूची

❑❑

अर्थ- उनका (कार्यजाल जो) किरणों की तरह शीघ्र फैला हुआ था, क्या वह मध्य में था? अथवा क्या वह नीचे था? अथवा क्या वह ऊपर था? (सृष्टि का) बीज धारण करने वाले थे; (आकाशादि) महाभूत थे; नीचे भोग्य था, ऊपर भोक्ता।

6. **को अद्धा वेद क इह प्र वोचत्कुत आजाता कुत इयं विसृष्टिः।**
अर्वाग्देवा अस्य विसर्जनेनाथा को वेद यत आबभूव॥

अर्थ- कौन सही रूप में जानता है? कौन यहाँ कहेगा कि यह कहाँ से उत्पन्न हुई हैं? यह विविध प्रकार की सृष्टि कहाँ से? देवता इस सृष्टि की अपेक्षा अर्वाचीन हैं। तब यह कौन जानता है, जहाँ से यह (सृष्टि) उत्पन्न हुई है?

7. **इयं विसृष्टिर्यत आबभूव यदि वा दधे यदि वा न।**
यो अस्याध्यक्षः परमे व्योमन् सो अङ्ग वेद यदि वा न वेद॥

अर्थ- यह विविध रूपों वाली सृष्टि जहाँ से आई है (उसको उसने) या तो धारण किया था, या अगर नहीं (तो किसने धारण किया था?))। जो इसका ईश्वर है, वह सर्वोच्च स्वर्ग में है; वही निश्चित रूप से इसे जानता है; यदि वह नहीं जानता (तो कौन जानता है?)

शुक्लयजुर्वेद

13. शिवसंकल्प सूक्त (अध्याय-34)

शुक्लयजुर्वेद माध्यन्दिनवाजसनेयिसंहिता
अध्याय-34 **कण्डिका** 1-**6 कुल मन्त्र-**06, **ऋषि-** याज्ञवल्क्य,
देवता -मनस्, **छन्द-**त्रिष्टुप्

1. **यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति।**
दूरङ्गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥

अर्थ- जो मन पुरुष की जाग्रतावस्था में अधिक दूर चला जाता है, जो एकमात्र आत्मा का दर्शन करने वाला है; जो पुरुष की सुषुप्तावस्था में उसी प्रकार लौट आता है (तथा) जो समस्त बाह्य इन्द्रियों का एकमात्र प्रकाशक है; वह मेरा मन शुभ सङ्कल्प वाला होवे।

2. **येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः।**
यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥

अर्थ- जिस मन में कर्मनिष्ठ बुद्धिमान् पुरुष यज्ञ में तथा उपासनाओं में कर्म करते हैं, जो सब (इन्द्रियों) से पहले उत्पन्न होता है, और यज्ञ करने में समर्थ है, तथा जो प्राणिमात्र के शरीर के भीतर रहता है, वह मेरा मन शुभ संकल्प वाला होवे।

3. **यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु।**
यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥

अर्थ- जो मन विशेषज्ञान तथा सामान्यज्ञान (का साधन) है, जो धैर्य रूप है, जो प्राणियों के भीतर (इन्द्रियों की प्रेरक) अमर ज्योति है तथा जिसके बिना कोई भी काम नहीं किया जा सकता, वह मेरा मन शुभ सङ्कल्प वाला होवे।

4. येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत्परिगृहीतममृतेन सर्वम्।
येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥

अर्थ- जिस अमर मन के द्वारा इस संसार में भूत, भविष्यत् और वर्तमानकाल के सब पदार्थ जाने जाते हैं, और जिसके द्वारा सात होता वाला (अग्निष्टोम) यज्ञ किया जाता है, वह मेरा मन शुभ संकल्प वाला होवे।

5. यस्मिन्नृचः साम यजूँषि यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः।
यस्मिँश्चित्तं सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥

अर्थ- रथ चक्र की नाभि में तीलियों की भाँति जिस मन में ऋचाएँ, साम और यजुः प्रतिष्ठित होते हैं, जिसमें प्राणियों का सर्वपदार्थविषयक ज्ञान निहित है, वह मेरा मन शुभसङ्कल्प वाला होवे।

6. सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिन इव।
हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥

अर्थ- जैसे अच्छा सारथी घोड़ों को इधर-उधर प्रेरित करता है और अपने वश में रखता है, उसी प्रकार जो मन प्राणियों को बार-बार इधर-उधर प्रेरित करता है और अपने वश में रखता है, जो हृदय में स्थित है, जो जरा से रहित तथा अत्यन्त वेगवान् है, वह मेरा मन शुभ संङ्कल्प वाला होवे।

14. प्रजापति सूक्त

(शुक्लयजुर्वेद अध्याय-23, मन्त्र-1-5 तक)

ऋषि - प्रजापति, **देवता -** परमेश्वर।

1. हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम॥

अर्थ- सृष्टि के आदिकाल में एक मात्र हिरण्यगर्भ पुरुष ही विद्यमान था। वह अकेला ही सर्व उत्पन्न मात्र भूतों का अधिपति या पालक था। उसी ने इस पृथिवी को धारण किया और इस द्युलोक को भी। उस प्रजापति को श्रद्धा भक्ति से परिचारित करें।

2. उपयामगृहीतोसि प्रजापतये त्वा जुष्टं गृह्णाम्येष ते योनिः सूर्यस्ते महिमा।
यस्तेऽहन्संवत्सरे महिमा संबभूव यस्ते वायावन्तरिक्षे महिमा संबभूव यस्ते।
दिवि सूर्ये महिमा संबभूव तस्मै ते महिम्ने प्रजापतये स्वाहा देवेभ्यः॥

अर्थ- (महिम ग्रह को ग्रहण करना।) हे ग्रह! तुम उपयाम पात्र के द्वारा ग्रहण किये गये हो। प्रजापति के लिए प्रिय तुम्हें मैं ग्रहण करता हूँ। (ग्रह को वेदि पर धरना।) यह तुम्हारा स्थान है। हे ग्रह! यह सूर्य तुम्हारी महिमा है। तुम्हारी जो महिमा दिन में, संवत्सर में उत्पन्न हुई, तुम्हारी जो महिमा वायु में, अन्तरिक्ष में उत्पन्न हुई तथा तुम्हारी जो महिमा द्युलोक में, सूर्य में उत्पन्न हुई- उस तुम्हारी महिमा के लिए, प्रजापति और अन्य देवों के लिए यह आहुति है।

3. यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो बभूव।
य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम॥

अर्थ- जो प्रजापति अपनी महिमा के कारण जगत् के सम्पूर्ण प्राणननिमेषोन्मेष करने वालों का स्वामी हुआ और जो इस समस्त द्विपाद-चतुष्पाद ऐश्वर्य का स्वामी है, उसी प्रजापति देव के लिए हम अपने धन-धान्यादि से सदा यज्ञादि करते रहें।

4. उपयामगृहीतोऽसि प्रजापतये त्वा जुष्टं गृहृणाम्येष ते योनिश्चन्द्रमास्ते महिमा यस्ते रात्रौ संवत्सरे महिमा संबभूव यस्ते पृथिव्यामग्नौ महिमा संबभूव यस्ते नक्षत्रेषु चन्द्रमसि महिमा संबभूव तस्मै ते महिम्ने प्रजापतये देवेभ्यः स्वाहा॥

अर्थ- हे पात्र! तुम उपयाम पात्र के द्वारा ग्रहण किये गये हो। प्रजापति के लिए प्रिय तुम्हें मैं ग्रहण करता हूँ। (ग्रह को वेदि पर धरना।) हे ग्रह! यह तुम्हारा स्थान है। हे ग्रह! यह चन्द्रमा तुम्हारी महिमा है। तुम्हारी जो महिमा रात्रि-संवत्सर में उत्पन्न हुई, तुम्हारी जो महिमा पृथ्वी-अग्नि में उत्पन्न हुई और तुम्हारी जो महिमा नक्षत्रों-चन्द्रमा में उत्पन्न हुई है, उस तुम महिमावान् प्रजापति तथा अन्य देवों के लिए यह आहुति है।

5. युञ्जन्ति ब्रध्नमरुषं चरन्तं परि तस्थुषः रोचन्ते रोचना दिवि॥

अर्थ- इस स्थिर जगत् के ऊपर रक्ताभ, स्व-कीली पर घूमने वाले तथा आकाशचारी सूर्य को ऋत्विज् अपनी स्तुतियों से स्वकार्यरत करते हैं। उसी की ज्योति से द्युलोक में यह रोचमानग्रह- नक्षत्र आदि प्रकाशित होते हैं।

अथर्ववेद

15. राष्ट्राभिवर्धन सूक्त

कुल मन्त्र-6, **ऋषि-** वशिष्ठ, **देवता -**ब्रह्मणस्पति, अभीवर्तमणि
छन्द-अनुष्टुप्

1. अभीवर्तेन मणिना येनेन्द्रो अभिवावृधे।
तेनास्मान् ब्रह्मणस्पतेभि राष्ट्राय वर्धय॥

अर्थ- हे ब्रह्मणस्पते! जिस समृद्धिदायक मणि से इन्द्र की वृद्धि हुई है, उसी मणि के द्वारा तू हमें देश के हित के निमित्त विस्तृत कर।

2. अभिऽवृत्य सपत्नानभि या नो अरातयः।
अभि पृतन्यन्तं तिष्ठाभि यो नो दुरस्यति॥

अर्थ- हे मणे! हमारे विरोधी हिंसक शत्रु सेनाओं को जो हमसे युद्ध करने की कामना करते हैं, जो हमसे द्वेष करते हैं, तू उन्हें घेरकर पराक्रमहीन कर।

3. अभि त्वा देवः सविताभि सोमो अवीवृधत्।
अभि त्वा विश्वा भूतान्यभीवर्तो यथाससि॥

अर्थ- हे मणे! सविता देवता ने तुझे समृद्ध और सोम ने तुझे विस्तृत किया है। सभी प्राणी